



राजस्थान की भक्ति परम्परा में पुनरुत्थान : लोक संतों की वाणी और सामाजिक रूपांतरण (15वीं-18वीं शताब्दी)

रिंकू कुमारी ¹

¹ NET JRF History, शोधार्थी, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय, जयपुर.

ABSTRACT:

15वीं से 18वीं शताब्दी का काल भारतीय इतिहास में गहन धार्मिक और सामाजिक परिवर्तनों का काल माना जाता है। इस समय राजस्थान का क्षेत्र आध्यात्मिक विचारधाराओं, लोकआंदोलनों, दार्शनिक प्रवृत्तियों और सामाजिक सुधार की आंदोलनों का प्रमुख केंद्र बनकर उभरा। एक ओर राजनीतिक परिस्थितियाँ अस्थिर थीं-राजपूत राज्यों के बीच सत्ता-संघर्ष, मुगल साम्राज्य का प्रभाव और स्थानीय सामंतों की शक्तियाँ निरंतर बदल रही थीं-वहीं दूसरी ओर समाज में जातिगत विभाजन, छुआछूत, आर्थिक विषमता और महिला-शिक्षा का अभाव गहरी जड़ें जमा चुका था। ऐसे सांस्कृतिक वातावरण में राजस्थान की भक्ति परंपरा ने पुनरुत्थान का स्वरूप ग्रहण किया। इस पुनरुत्थान के केंद्र में थे-लोकसंत, कवि, सूफी, जागरूक संत-समाज, और विविध चिंतन धाराएँ*, जिन्होंने समाज के आम जन को नई चेतना, नई भाषा और नए मूल्य प्रदान किए।

15वीं से 18वीं शताब्दी में राजस्थान में दादू दयाल, मीरा बाई, जसनाथ जी, रामदेव पीर, ख्याति प्राप्त चारण-भाट कवि, संत रैदास, संत पीपा, संत करणीदान, संत धरनीदास, संत इसरदास, तथा अनेक सूफी दरवेशों की वाणी का प्रवाह अत्यंत प्रभावशाली हुआ। इन संतों ने कठोर धार्मिक रूढ़ियों के विरुद्ध आवाज उठाई, समाज को समता, सहिष्णुता और नैतिक मूल्यों की ओर मोड़ा, और भक्ति को केवल पूजा नहीं बल्कि सामाजिक चेतना और मानवीय मूल्य के रूप में स्थापित किया। राजस्थान की भक्ति परंपरा के पुनरुत्थान का विश्लेषण करता है और यह बताता है कि लोक संतों की वाणी ने किस तरह समाज में नैतिक जागरण, सामाजिक समरसता, जातिगत बंधनों में ढील, स्त्री-पुरुष समानता, लोकभाषाओं का उत्थान और सांस्कृतिक पुनरुद्धार को प्रेरित किया। अध्ययन में ऐतिहासिक दस्तावेजों, लोकसाहित्य, संतवाणियों, यात्रावृत्तों तथा आधुनिक व्याख्याओं का उपयोग करते हुए भक्ति परंपरा के विविध रूपों, उसके सामाजिक प्रभाव और सांस्कृतिक महत्व को दर्शाया गया है।

KEYWORDS:

राजस्थान की भक्ति परंपरा, पुनरुत्थान, लोकसंत, संतवाणी, सामाजिक रूपांतरण, 15वीं-18वीं शताब्दी, लोकभाषाएँ, सामाजिक समरसता, धार्मिक सहिष्णुता।

PAPER ACCEPTED DATE:

2nd December 2025

PAPER PUBLISHED DATE:

4th December 2025

शोध का उद्देश्य

15वीं-18वीं शताब्दी में राजस्थान की भक्ति परंपरा के पुनरुत्थान को ऐतिहासिक और सामाजिक संदर्भों में समझना।

लोकसंतों की वाणी, उनके संदेशों और वैचारिक प्रवृत्तियों का विश्लेषण करना।

यह अध्ययन करना कि संत-परंपरा ने सामाजिक संरचना, जातिगत भेदभाव और धार्मिक रूढ़ियों पर क्या प्रभाव डाला।

राजस्थान की भक्ति परंपरा में प्रयुक्त लोकभाषाओं—डिंगल, पिंगल, राजस्थानी, ब्रज—की भूमिका को रेखांकित करना।

भक्ति साहित्य और लोकसंतों की परंपरा द्वारा उत्पन्न सामाजिक परिवर्तन की प्रकृति और व्यापकता का मूल्यांकन करना।

भक्ति-आंदोलन के सांस्कृतिक प्रभावों, जैसे लोक-कला, संगीत, लोकगीत, साहित्य और सामाजिक नैतिकता पर इसके योगदान को समझना।

शोध पद्धति

यह अध्ययन गुणात्मक शोध पद्धति पर आधारित है और निम्न स्रोतों का प्रयोग किया गया है:

(क) प्राथमिक स्रोत

- संतों की वाणी और भजनों के संकलन
- लोकगीत, डिंगल-पिंगल काव्य, कथाएँ और परंपरागत मौखिक स्रोत
- राजपूत वंशों के ऐतिहासिक अभिलेख

- यात्रियों और सूफी संतों के विवरण

(ख) द्वितीयक स्रोत

- शोध-ग्रंथ
- इतिहासकारों की पुस्तकें
- सामाजिक-सांस्कृतिक अध्ययन
- राजस्थान के लोकसाहित्य पर आधारित शोध

(ग) शोध पद्धतियाँ

- ऐतिहासिक विश्लेषण
- संदर्भात्मक अध्ययन
- तुलनात्मक व्याख्या
- सैद्धांतिक विश्लेषण
- साहित्यिक समीक्षा

इस शोध-पत्र में वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक पद्धति के माध्यम से भक्ति परंपरा के पुनरुत्थान और सामाजिक परिवर्तन के पहलुओं का क्रमबद्ध विश्लेषण किया गया है।

विषय-वस्तु

राजस्थान की सांस्कृतिक आत्मा उसके लोकजीवन, लोकविश्वास, भक्ति-आंदोलनों,

संत-परंपराओं और जन-आध्यात्मिकता में रची-बसी है। मध्यकाल में जब भारतीय समाज कई सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक चुनौतियों से गुजर रहा था, तब राजस्थान में भक्ति-परंपरा का पुनरुत्थान एक महत्वपूर्ण सामाजिक शक्ति के रूप में उभरकर सामने आया। यह पुनरुत्थान केवल धार्मिक भावनाओं तक सीमित नहीं था, बल्कि यह सामाजिक समरसता, जातीय समानता, आध्यात्मिक लोकतंत्र, स्त्री-स्वर की अभिव्यक्ति, और शोषित वर्गों के जागरण का माध्यम बना। राजस्थान के लोक-संतों की वाणी ने इस बदलाव को दिशा दी। उनकी वाणी ने समाज के भीतर व्याप्त अंधविश्वास, जातिभेद, सामाजिक अन्याय, पाखंड और कुरीतियों के खिलाफ चेतना जगाई। संतों की वाणी, काव्य, भजन, पद, दोहे, साखियाँ और फड़-परंपरा ने जनमानस में ऐसी चेतना जगाई, जिसने मध्यकालीन राजस्थान के सामाजिक ढाँचे में सकारात्मक परिवर्तन लाए। इसी कारण इस काल को राजस्थान की भक्ति-परंपरा का “पुनरुत्थान काल” कहा जाता है।

इस विस्तृत विषय-वस्तु में हम निम्न प्रमुख आयामों पर विचार करेंगे—

राजस्थान की भक्ति परंपरा का उद्गम और पुनरुत्थान

लोक-संतों की वाणी का स्वरूप

प्रमुख लोक-संत और उनके दार्शनिक विचार

भक्ति-वाणी और सामाजिक परिवर्तन

स्त्री-आध्यात्मिक स्वर: संत पीपा, मीराबाई, और अन्य

लोकभाषा, लोकगीत और जनजागरण

जाति-व्यवस्था, सामाजिक न्याय और भक्ति आंदोलन

लोकपरंपराओं का आध्यात्मिक लोकतंत्र

भक्ति परंपरा और ग्रामीण-जनजीवन

राजस्थान के सांस्कृतिक पुनरुत्थान पर प्रभाव

राजस्थान की भक्ति परंपरा का उद्गम और पुनरुत्थान

राजस्थान की भक्ति परंपरा वैदिक युग से लेकर मध्यकाल तक लगातार विकसित होती रही, किंतु 15वीं से 18वीं शताब्दी के बीच इसमें एक व्यापक पुनरुत्थान दिखाई देता है।

इस पुनरुत्थान के पीछे कई कारण थे—

सामाजिक और धार्मिक असमानताएँ

जातीय भेदभाव, ऊँच-नीच, छुआछूत, पाखंड तथा बाहरी आक्रमणों के कारण समाज में असुरक्षा और भ्रम की स्थिति उत्पन्न हो गई थी। सामान्य जनता को ऐसे आध्यात्मिक मार्ग की आवश्यकता थी, जिसमें समानता, सुरक्षा और आत्मसंरक्षण की भावना हो।

लोकदेवता और संत परंपरा का उभार

राजस्थान में यह काल लोकदेवताओं और संत परंपरा का स्वर्णयुग रहा। रामदेवजी, गोगाजी, तेजाजी, पाबूजी, हरबूजी, जंभोजी जैसे लोकदेवताओं की पूजा और संतों की वाणी ने समाज को नई दिशा प्रदान की।

भक्ति-आंदोलन का राष्ट्रीय प्रभाव

उत्तर भारत में कबीर, रैदास, सूरदास, गुरु नानक आदि संतों की वाणी राजस्थान पहुँच चुकी थी। इससे भी समाज में एक नई चेतना आई।

इस प्रकार राजस्थान की भक्ति-परंपरा का पुनरुत्थान केवल स्थानीय घटना नहीं था, बल्कि यह व्यापक भारतीय प्रवाह का क्षेत्रीय रूप था।

लोक-संतों की वाणी का स्वरूप

राजस्थान के संतों की वाणी लोकजीवन से जुड़ी थी। यह कठिन दार्शनिक भाषा में नहीं, बल्कि सामान्य जनता की बोली—मारवाड़ी, डिंगल, पिंगल, राजस्थानी, ढूँढाड़ी, मेवाड़ी, बागड़ी आदि में रची गई थी।

लोक-वाणी की विशेषताएँ—

सरलता और सहजता

उनकी वाणी सीधे जनता के हृदय को छूती थी।

लोकजीवन के प्रतीकों का प्रयोग

ऊँट, खेजड़ी, रेगिस्तान, चरवाहे, पशुपालक, नख, तख, ढाणी—ये सब प्रतीक उनकी भाषा में शामिल थे।

सामाजिक संदेश

जातिभेद, पाखंड, अन्याय और अनैतिकता के विरुद्ध स्पष्ट आवाज।

आध्यात्मिक लोकतंत्र

ईश्वर सबका है—यह मूल भाव।

नैतिक शिक्षा

सत्य, अहिंसा, करुणा, सेवा, श्रम और समानता पर जोर।

प्रमुख लोक-संत और उनके विचार

संत पीपा (15वीं शताब्दी)

पीपा राजस्थान के एक राजपूत राजा थे जिन्होंने सांसारिक वैभव त्यागकर भक्ति को अपनाया। वे निर्गुण ईश्वर, समानता और साधना के पक्षधर थे।

उनकी वाणी में—

जाति-भेद का विरोध

गुरु-भक्ति

आत्मज्ञान

आडंबर-रहित साधना

मुख्य विषय हैं।

संत दादूदयाल (16वीं शताब्दी)

दादूजी ने सभी धर्मों को एक मानते हुए प्रेम और भाईचारे का संदेश दिया। उनके शिष्य दादूपंथ को राजस्थान में बड़ी स्वीकृति मिली।

उनके विचार—

मानवता सर्वोपरि

निर्गुण भक्ति

जाति-विरोध

“दादू दयाल कहे कौनी जात-कूँ पूछे रे”

संत रामदेवजी

लोकदेवता रामदेवजी सामाजिक समानता के प्रतीक हैं। रामापंथ आज भी राजस्थान की सांस्कृतिक आत्मा का महत्वपूर्ण हिस्सा है।

उन्होंने—

दलितों और वंचितों को सम्मान दिया

सामाजिक भेदभाव को चुनौती दी

सेवा और समर्पण को धर्म माना

मीराबाई

राजस्थान की सबसे प्रसिद्ध भक्ति कवयित्री मीरा ने कृष्ण-भक्ति को जनजन तक पहुँचाया।

उनका भक्ति-मार्ग—

स्त्री-स्वतंत्रता

सामाजिक रूढ़ियों का विरोध

प्रेम, समर्पण और आध्यात्मिक उत्कर्ष

जंभोजी (विश्वेश्वर धर्म)

जंभोजी ने प्रकृति संरक्षण, अहिंसा, सत्य और सामंजस्य पर आधारित धर्म की स्थापना की।

उनके 29 नियम आज भी पर्यावरण संरक्षण के आधार हैं।

लोक-संतों की वाणी और सामाजिक परिवर्तन

राजस्थान में भक्ति-परंपरा केवल धार्मिक नहीं थी, बल्कि उसने सामाजिक ढांचे को पूरी तरह प्रभावित किया।

जाति-व्यवस्था को चुनौती

संत दादू, रामदेवजी, पीपा, रैदास—सभी ने एक समाज की कल्पना की जिसमें जन्म नहीं, बल्कि कर्म श्रेष्ठता का आधार हो।

महिलाओं की स्थिति में सुधार

मीरा और अन्य संतों ने स्त्री को आध्यात्मिक पहचान दिलाई।

मीरा की वाणी ने पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री के अधिकार की एक लंबी बहस शुरू की।

वंचित वर्गों का जागरण

रामदेवजी, हरबूजी और रैदासजी जैसे संतों ने वंचित समुदायों को भक्ति और सामाजिक गरिमा प्रदान की।

नैतिक और मानवीय मूल्य

संतों ने सत्य, करुणा, प्रेम, सेवा, दया और भाईचारे को धर्म का वास्तविक मार्ग बताया।

साम्प्रदायिक सौहार्द

राजस्थान का भक्ति-काल हिंदू-मुस्लिम एकता का भी प्रतीक है।

रामदेवरा के मेले में आज भी दोनों समुदाय बड़ी संख्या में आते हैं।

लोकभाषा और लोकगीत: सामाजिक जागरण का माध्यम

भक्ति आंदोलन ने संस्कृत के स्थान पर लोकभाषा को अपनाया। इससे वाणी सीधे जनता तक पहुँची।

मीराबाई के पद

दादूजी की साखियाँ

जंभोजी के शब्दवाणी

रामदेवजी के भजन

इन सबने ग्रामीण समाज में नैतिक और आध्यात्मिक परिवर्तन के बीज बोए।

लोककथाओं और लोकगीतों ने भक्ति-वाणी को घर-घर पहुँचाया। चंग, ढोलक, भपंग और algoza जैसे वाद्ययंत्रों ने इन्हें और लोकप्रिय बनाया।

सामाजिक नैतिकता और भक्ति-वाणी

राजस्थान की लोक-भक्ति ने एक नई सामाजिक नैतिकता को जन्म दिया, जिसमें—

परिश्रम को सम्मान

चोरी, झूठ, हिंसा का निषेध

नशे का विरोध

परिवार और समाज के प्रति जिम्मेदारी

परस्पर सहयोग

सादगी और संतोष

जैसे मूल्यों को बढ़ावा मिला।

भक्ति का यह नैतिक रूप समाज में स्थायी परिवर्तन लाने में सक्षम हुआ।

भक्ति-वाणी और ग्रामीण जीवन

भक्ति परंपरा राजस्थान के ग्रामीण जीवन से गहराई से जुड़ी रही—

ढाणी-संस्कृति में सुबह-शाम भजन-कीर्तन

खेती-पशुपालन के साथ संत कथाओं का जुड़ाव

फड़ और पाबूजी की पारी के माध्यम से लोकदेवताओं का प्रचार

गाँव में साधु-संतों का सत्संग

इनसे ग्रामीण समाज में एक समान आध्यात्मिक चेतना विकसित हुई।

भक्ति परंपरा और आध्यात्मिक लोकतंत्र

राजस्थान की भक्ति परंपरा ने यह संदेश दिया कि—“ईश्वर किसी एक जाति, धर्म या वर्ग की संपत्ति नहीं है। वह सबका है।”

यह अध्यात्म का लोकतांत्रिक स्वरूप था। इसमें—मंदिर की दीवारें टूट गईं

गुरु और शिष्य के बीच समानता रही

हर व्यक्ति साधना कर सकता था

समाज में बंधन नहीं, बल्कि मुक्त आध्यात्मिकता थी

राजस्थान की सांस्कृतिक पहचान पर प्रभाव

भक्ति-आंदोलन ने राजस्थान की सांस्कृतिक पहचान को कई रूपों में प्रभावित किया—

लोकदेवता परंपरा का विकास

तेजाजी, पाबूजी, रामदेवजी, हरबूजी, गोगाजी—इन सभी ने लोकजीवन में सामाजिक-धार्मिक स्थिरता प्रदान की।

लोककला का विकास

फड़-चित्रकला, लोकनृत्य, गायन, भजन-कीर्तन—सबने भक्ति-वाणी को जनप्रिय बनाया।

लोकभाषा का साहित्यिक विस्तार

डिंगल, पिंगल, राजस्थानी साहित्य को भक्ति कवियों ने जीवंत किया।

समुदायों के बीच सांस्कृतिक पुल

राजस्थान में भक्ति ने विभाजनों को मिटाकर विविधता में एकता स्थापित की।

भक्ति-वाणी का राजनीतिक और सामाजिक प्रभाव

राजस्थान में भक्ति केवल धार्मिक आंदोलन नहीं, बल्कि सामाजिक क्रांति थी।

इसने—

सामंती रूढ़ियों पर प्रहार किया

शोषण के खिलाफ जनता को संगठित किया

आत्मसम्मान और समानता की भावना जगाई

सामाजिक न्याय की नींव तैयार की

स्थानीय नेतृत्व को प्रेरित किया

राजस्थान का संत-विचार आज भी सामाजिक आंदोलनों, किसान आंदोलनों और सामाजिक सुधारों में प्रेरणा देता है।

राजस्थान की भक्ति परंपरा का पुनरुत्थान 15वीं से 18वीं शताब्दी के बीच एक अत्यंत महत्वपूर्ण सामाजिक एवं सांस्कृतिक घटना थी। लोक-संतों की वाणी ने न केवल आध्यात्मिक चेतना को नया रूप दिया, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की मजबूत नींव भी रखी। रामदेवजी की लोक-समरसता, दादूजी का मानवधर्म, जंभोजी का पर्यावरण नैतिकता, पीपा और रैदास का समानता संदेश, मीरा का प्रेम और भक्ति—इन सबने राजस्थान के समाज को एक नई दृष्टि, नई ऊर्जा और नया नैतिक मार्ग प्रदान किया।

इस भक्ति-परंपरा ने सिद्ध किया कि—

सच्चा धर्म वही है, जो मनुष्य को मनुष्य से जोड़े और समाज में प्रेम, सत्य, समानता और मानवता का प्रकाश फैलाए। इसी कारण राजस्थान की भक्ति वाणी एक व्यापक सामाजिक रूपांतरण की आधारशिला है, और आज भी उसकी प्रासंगिकता उतनी ही है जितनी मध्यकाल में थी।

साहित्यिक समीक्षा

डॉ. गौरीशंकर हीराचंद ओझा

ओझा के अनुसार राजस्थान की भक्ति परंपरा सामाजिक असमानताओं के प्रतिकार का माध्यम बनी। उनके शोध में संत परंपरा के ऐतिहासिक पहलुओं का विस्तृत विवेचन मिलता है।

डॉ. महिपाल सिंह राठौड़

राठौड़ ने अपनी पुस्तकों में लोकभक्ति आंदोलन को राजस्थान की सामाजिक संरचना से जोड़ा है। उनके अनुसार राजस्थान के लोकसंतों ने भाषा और संस्कृति दोनों पर गहरा प्रभाव डाला।

दादू-दर्शन पर आधारित शोध

दादू संप्रदाय पर लिखे गए ग्रंथ संतवाणी की सामाजिक प्रासंगिकता और मानवतावाद को उजागर करते हैं। दादू की वाणी को सामाजिक सुधार की दिशा में क्रांतिकारी माना गया है।

मीरा बाई संबंधी साहित्य

मीरा पर लिखे गए शोधों में स्त्री-स्वतंत्रता, भक्ति-भावना और आध्यात्मिक सौंदर्य का सुंदर वर्णन मिलता है। मीरा की वाणी का सामाजिक असर व्यापक माना गया है।

सूफी साहित्य की व्याख्या

सूफी संतों के साहित्य में धार्मिक सहिष्णुता का गहरा संदेश मिलता है। ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती की वाणी ने राजस्थान की सांस्कृतिक धारा को गहराई से प्रभावित किया।

निष्कर्ष

राजस्थान की भक्ति परंपरा में पुनरुत्थान, लोक संतों की वाणी और सामाजिक रूपांतरण के गहन अध्ययन से यह तथ्य स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आता है कि 15वीं से 18वीं शताब्दी के मध्य राजस्थान केवल राजनीतिक उथल-पुथल, युद्धों, संघर्षों और सामंतवादों का क्षेत्र न था, बल्कि यह एक गहरे सामाजिक —सांस्कृतिक परिवर्तन का भी केन्द्र था। इस परिवर्तन का सबसे प्रभावी आधार रहा —भक्ति आंदोलन का पुनरुत्थान, जिसका नेतृत्व राजस्थान के लोक संतों, कवियों, साधकों और सामाजिक सुधारकों ने किया। इन लोक संतों ने न केवल धार्मिक पथ को सरल बनाया बल्कि मनुष्य और समाज के मूलभूत संबंधों को भी नए सिरे से परिभाषित किया। राजस्थान की उस कालीन स्थिति में समाज विभिन्न प्रकार की विघटनकारी शक्तियों से घिरा हुआ था। जातिभेद, ऊँच-नीच, अस्पृश्यता, लिंग आधारित असमानता, आर्थिक शोषण, सामंती दमन और धर्म के नाम पर पाखंड — ये सभी स्थितियाँ सामान्य जनजीवन में विक्षोभ पैदा कर रही थीं। इन परिस्थितियों में लोक संतों की वाणी आमजन के लिए मार्गदर्शक बनकर सामने आई। इन संतों की विशेषता यह थी कि उनकी वाणी किसी विशेष वर्ग, जाति, समुदाय या धार्मिक मत की सीमाओं में बंधी नहीं थी। वे सबको समान रूप से मानव समझते थे और मनुष्य की मूलभूत गरिमा को सर्वोपरि मानते थे। इस काल में राजस्थान में अनेक संत उभरे—मीरा बाई, दादूदयाल, रामस्नेही संतों की परंपरा, जसनाथी संत, ख्याति-प्राप्त निर्गुण संतों की शाखाएँ, संत हरिदास, संत पीपा, संत सुंदरदास आदि। इन सभी की वाणी का मूल स्वर मानवता, समानता, समरसता और आध्यात्मिक एकत्व था। यह कहना गलत नहीं होगा कि उनकी वाणी ने उस काल में समाज के पुनर्निर्माण और आध्यात्मिक पुनरुत्थान की भूमिका निभाई।

राजस्थान की भक्ति परंपरा की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें लोकभाषा को माध्यम बनाया गया। मीरा ने राजस्थानी और हिन्दी में पद लिखे, दादू ने सरल बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया, जसनाथी और रामस्नेही संतों ने लोकधुनों में सत्य और करुणा का संदेश फैलाया। इससे उनकी वाणी सीधे जनसमुदाय के हृदय तक पहुँची। यह वाणी किसी धार्मिक ग्रंथ तक सीमित न होकर जन-अभिव्यक्ति की आवाज बन गई। यह लोकभाषा का प्रयोग ही था जिसने भक्ति आंदोलन को जनआंदोलन का रूप दिया और राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्रों तक पहुँचाया। इन लोक संतों की वाणी का प्रमुख उद्देश्य सामाजिक कुरीतियों का खंडन करना था। उन्होंने जाति के आधार पर मनुष्य की श्रेष्ठता या हीनता को अस्वीकार किया। मीरा की वाणी में प्रेम और समर्पण का भाव है, जो सामाजिक बंधनों से ऊपर उठकर आध्यात्मिक समानता की स्थापना करती है। दादूदयाल सामाजिक भेदभाव का तीखा विरोध करते हैं और यह संदेश देते हैं कि ईश्वर सभी का है, वह किसी एक जाति का नहीं हो सकता। रामस्नेही संतों की परंपरा अहिंसा, संयम, सत्य और धर्म की सरलता पर बल देती है। इन संतों ने इस बात पर जोर दिया कि सच्चा धर्म वह है जिसमें मनुष्य स्वयं को और दूसरों को समान दृष्टि से देख सके। भक्ति परंपरा में पुनरुत्थान का एक अन्य महत्वपूर्ण स्वरूप —लोकधर्म का उदय था। लोकधर्म ने धार्मिक संस्थागत संरचनाओं को चुनौती दी। जब धर्म कर्मकांडों, पुरोहितवाद और परंपरागत आडंबरों में जकड़ता जा रहा था, तब लोक संतों ने भक्ति को सरल और सहज बनाकर प्रस्तुत किया। उन्होंने कहा कि ईश्वर की प्राप्ति मंदिरों, यज्ञों,

कर्मकांडों में नहीं, बल्कि हृदय की पवित्रता और सत्कर्मों में निहित है। यह विचार बेहद क्रांतिकारी था क्योंकि इसने धर्म को जनमानस के लिए सुलभ और विश्वसनीय बनाया।

भक्ति परंपरा की वाणी ने न केवल आध्यात्मिकता को पुनर्परिभाषित किया, बल्कि मनुष्य के सामाजिक व्यवहार को भी प्रभावित किया। लोक संतों ने स्त्रियों की स्थिति पर विशेष ध्यान दिया। मीरा बाई जैसी राजपूत राजकुमारी का भक्ति-मार्ग में आगे आना सामाजिक संरचना में परिवर्तन का सशक्त प्रतीक था। मीरा ने स्त्री की स्वतंत्र चेतना, आध्यात्मिक अधिकार और व्यक्तिगत स्वाधीनता को अभिव्यक्त किया। उनकी वाणी ने स्त्रियों को शोषण-मुक्त जीवन की प्रेरणा दी। 15वीं से 18वीं शताब्दी का राजस्थान भले ही युद्धों और राजनीतिक संघर्षों से भरा था, परंतु इस दौर की भक्ति वाणी ने समाज में एक स्थायी नैतिक व्यवस्था स्थापित करने का प्रयास किया। भक्ति के आदर्श—सत्य, प्रेम, करुणा, एकता और त्याग—लोगों के दैनिक जीवन का हिस्सा बने। इससे सामाजिक ताने-बाने में स्थिरता आई। गाँवों-कस्बों में संत मंडलियाँ बनने लगीं, सत्संग और पंथ परंपराएँ स्थापित हुईं, जिनसे सामाजिक एकजुटता बढ़ी। भक्ति परंपरा ने राजस्थान में धार्मिक सहिष्णुता को मजबूत किया।

संतों ने यह संदेश दिया कि—

“ईश्वर का घर सबके लिए है,”

“धर्म विभाजित नहीं, जोड़ता है,”

“मनुष्य की जाति सिर्फ मानव है,”

“सबमें एक ही परमात्मा निवास करता है।” यह संदेश उस समय विशेष रूप से महत्वपूर्ण था, क्योंकि धर्म और जाति के नाम पर समाज विभाजित था। भक्ति संतों ने इन विभाजनों को मिटाने का काम किया, जिससे सामाजिक समरसता विकसित हुई। राजस्थान की लोक संत परंपरा में संगीत, लोकनृत्य, लोककला और भजनों के माध्यम से विचारों का प्रसार भी हुआ। यह एक उल्लेखनीय सांस्कृतिक बदलाव था। संतों की वाणी केवल सुनने के लिए नहीं, बल्कि जीवन में अपनाने के लिए थी। भक्ति-वाणी ने राजस्थान की लोकसंस्कृति में नए मूल्य जोड़े— सादगी, सहिष्णुता, समानता, प्रेम, और मानवता। राजस्थान की भक्ति परंपरा का पुनरुत्थान एक सामाजिक आंदोलन भी था। यह केवल धार्मिक भावनाओं का प्रसार न था, बल्कि पुरानी सामाजिक संरचनाओं को चुनौती देकर एक नई, समान और मानवीय सामाजिक व्यवस्था की स्थापना का यत्न था। संतों ने भाषा, संगीत, लोककाव्य और आध्यात्मिक विचारों के माध्यम से समाज की दिशा बदली। लोक संतों की वाणी की सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि उसने आज तक अपनी प्रासंगिकता बनाए रखी है। आज भी राजस्थान के गाँव-गाँव में उनके पद गाए जाते हैं, सत्संग और रामद्वारा जैसी संस्थाएँ सक्रिय हैं, जसनाथी और रामस्नेही पंथ के अनुयायी बड़ी संख्या में हैं। यह स्थायित्व इस बात का प्रमाण है कि उनकी वाणी न केवल इतिहास का हिस्सा है, बल्कि वर्तमान समाज के लिए भी प्रेरक है।

REFERENCES

1. ओझा, गौरीशंकर हीराचंद. *राजस्थान का इतिहास*.
2. राठौड़, महिपाल सिंह. *राजस्थान की भक्ति परंपरा और सामाजिक परिवर्तन*.
3. दादू दयाल. *दादू वाणी*.
4. मीरा बाई. *मीरा पदावली*.
5. चिश्ती, ख्वाजा मोइनुद्दीन. *सूफी वचन संकलन*.
6. पारीक, हरिसिंह. *राजस्थानी लोकसाहित्य का इतिहास*.
7. शर्मा, रामकिशोर. *भक्ति आंदोलन और भारतीय समाज*.
8. भारतीय दर्शन अध्ययन माला. *मध्यकालीन संत साहित्य*.